मधुर-धुनि, मुरली बजावत कान्ह ।
धुनि सुनि विधि, हरि, हर सब मोहे, छुत्यो ज्ञानि-जन-ध्यान ।
जंगम जीव, भये जड़ सिगरे, जड़, जंगम सुनि तान ।
जो जैसेहिं, तैसेहिं उठि धाईं, गोपिन तजि कुल-कान ।
नभ तारागन, चंद्रादिक कहँ, निज-निज गतिहिं भुलान ।
एक 'कृपालुहिं' बच्यो जगत महँ, निश्चल शैल समान ॥

भावार्थ-
श्री श्यामसुन्दर अत्यन्त ही मीठे स्वर में वंशी बजा रहे हैं, जिसकी ध्वनि सुनकर ब्रह्मा, विष्णु, शंकर आदि सभी मुग्ध हो गये एवं ब्रह्मलीन ज्ञानियों के समाधिस्थ ध्यान छूट गये । पशु-पक्षी आदि चलने-फिरने वाले जीव जड़ के समान ठगे-से खड़े रह गये । पत्थर आदि जड़ जीव जंगम की भाँति पघल-पिघलकर बहने लगे । मुरली की तान सुनकर ब्रज-गोपियों ने भी कुल की मर्यादा खो दी एवं जिस अवस्था में थीं, उसी अवस्था में उठकर भागती हुई श्यामसुन्दर के पास पहुँच गईं । आकाश में स्थित तारागण एवं चन्द्रिमा आदि भी अपनी-अपनी गति को भूल गये । **'कृपालु'** कहते हैं कि समस्त संसार में अकेला मैं ही निश्चल पर्वत की तरह स्थित रहा । मेरे ऊपर मुरली का कोई प्रभाव नहीं पड़ सका ।

© 2008 जगद्गुरु कृपालु परिशत्